करता है। वह आवश्यकता से अधिक न तो भोजन करता है और न उपवास ही, इसलिए योगाभ्यास के लिए सब प्रकार से योग्य है। अतिभोजी को स्वप्न भी अधिक आते हैं, जिससे वह आवश्यकता के अधिक समय निद्रामग्न रहता है। दिन में छः घण्टे से अधिक सोने वाला अवश्य तमोगुणी है। तमोगुणी व्यक्ति मन्द और अत्यधिक निद्रोन्मुखी होता है। ऐसा मनुष्य योग का अभ्यास नहीं कर सकता।

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा।।१७।।

युक्त=नियमित; **आहार**=भोजन; **विहारस्य**=विहार करने वाले का; **युक्त**=नियमित; **चेष्टस्य**=शरीर-निर्वाह के लिए प्रयत्न करने वाले का; **कर्मसु**=कर्तव्य-पूर्ति में; **युक्त**=नियमित; **स्वप्न अवबोधस्य**=सोने और जागने वाले का; **योगः**=योगाभ्यास; **भवति**=होता है; **दुःखहा**=दुःखों का नाश करने वाला।

अनुवाद

जो यथायोग्य आहार, निद्रा, कर्म और विहार करता है, वही योगाभ्यास के द्वारा सम्पूर्ण सांसारिक दुःखों से मुक्त हो सकता है।।१७।।

तात्पर्य

आहार, निद्रा, भय और मैथुनादि शारीरिक आवश्यकताओं के सम्बन्ध में उच्छृंखलता योगाभ्यास की प्रगति में बाधक सिद्ध हो सकती है। खाना तभी संयमित हो सकता है जब केवल भगवत्प्रसाद ग्रहण किया जाय। भगवद्गीता (९.२६) के अनुसार अन्न, शाक, फल, फूल तथा दुग्ध आदि पदार्थ भगवान् श्रीकृष्ण को अर्पण करने योग्य हैं। इस प्रकार कृष्णभावनाभावित भक्त को मानव के अयोग्य राज़सी और तामसी भोजन ग्रहण न करने की शिक्षा अपने-आप मिल जाती है। जहाँ तक निद्रा का सम्बन्ध है, कृष्णभावनाभावित भक्त अपने कृष्णभावनामय कर्तव्यों के पालन में सदा सचेत रहता है। अतः निद्रा में आवश्यकता से अधिक समय के व्यय को वह महान् हानि मानता है। वह जीवन का एक भी क्षण भगवत्सेवा के बिना नहीं बिता सकता इसलिए कम से कम सोता है। इस सन्दर्भ में उसके आदर्श श्रील रूप गोस्वामी हैं, जो सदा-सर्वदा कृष्णसेवामृत में तन्मय रहते हुए दो घण्टे से अधिक और कभी-कभी तो इतना भी नहीं सोते थे। क्षणभर के लिए सोना तो दूर, नामाचार्य ठाकुर हरिदास तो प्रतिदिन तीन लाख बार भगवन्नाम का जप किये बिना प्रसाद भी ग्रहण नहीं करते थे। जहाँ तक कर्म का सम्बन्ध है, कृष्णभावनाभावित महात्मा ऐसा कोई कार्य नहीं करता, जो श्रीकृष्ण के मन के अनुकूल न हो। इस प्रकार मर्यादित हुए उसके कर्म इन्द्रियतृप्ति से कलुषित नहीं होते। इन्द्रियतृप्ति को स्थान न होने से कृष्णभावनाभावित भक्त के लिए किसी भी प्रकार का इन्द्रिय-सुख असम्भव हो जाता है। वह अपने कर्म, वाणी, निद्रा, जागृति तथा अन्य सब शारीरिक क्रियाओं में मर्यादित रहता है; इसलिए उसे कभी किसी लौकिक दुःख की प्राप्ति नहीं होती।